International Journal of Academic Research and Development
ISSN: 2455-4197, Impact Factor: RJIF 5.22
www.academicsjournal.com
Volume 2; Issue 4; July 2017; Page No. 692-693

आर्य समाज एवं समाज सुधार आंदोलन

सुलोचना देवी

Research Scholar, Singhania University, Pacheri Bari, Jhunjhunu, Rajasthan, India

प्रस्तावना

आर्य समाज की स्थापना से पूर्व आर्य हिन्दु जाति अनेक कुरीतियों में जकड़ी होने के कारण कमजोर हो रही थी। 700 वर्षों के मुस्लिम राज्य एवं 175 वर्षों की अंग्रेजी गुलामी के कारण हिन्दु जाति अपने धर्म, देश एवं जातिय गौरव को भूलती जा रही थी इस्लाम की तलवार के डर से एंव ईसाईयों के धन प्रलोभनों के कारण हजारों हिन्दु अपने धर्म (वैदिक धर्म) को त्याग चुके थे। कान्वेंट स्कूलों की शिक्षा बच्चों में हमारी शिक्षा, संस्कृति एवं सभ्यता के प्रति जहर घोलकर उन्हे मानसिक रुप से ईसाई बना रही थी।

बाल विवाह अनमेल विवाह व सती प्रथा के कारण व स्त्री शिक्षा के अभाव में यह देश स्त्रियों के लिए यातनाशीला बन चुका था। मूर्ति पूजा (जड़ पूजा), मृतक श्राद, अवतारवाद, नरबलि, पशुबलि, गुरुडम, पाखण्ड ढोंग, तीर्थों आदि के अन्धविश्वास से ईश्वर उपासना के स्थान पर लड़ पूजा अपना ली गई थी। शैव, शाक्त, वैष्णव आदि अनेक मत मतान्तरों की वृद्धि के कारण यह जाति सूत के कच्चे धागे का रुप ले चुकी थी। कर्म व वर्ण व्यवस्था के स्थान पर जन्म से जाति व्यवस्था होने से छुआछूत एवं भेदभाव भावना समाज को तोड़ रही थी। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने ऐसी विषम परिस्थितियों में समस्त बुराईयों एवं कुरितयों तथा स्व संस्कृति पर चौतरफा हमले से इस जाति को बचाने के लिए आर्य समाज की स्थापना की व समाज सुधार के लिए शिक्षा को माध्यम बनाया। आर्य समाज ने इस सम्बन्ध में महत्वपूर्ण योगदान दिया जिसका इतिहास साक्षी है।

प्रारम्भ से ही आर्य समाज को असाधारण सफलता प्राप्त होने लगी थी। जाति की नीवं को तो महर्षि दयानन्द ने तोड़ दिया था। उनके अगाध पाण्डितय और अद्भेत तर्क शक्ति ने मध्यकालीन अन्धेरे को छिन्न– भिन्न कर दिया था। एक बार महर्षि दयानन्द किसी नाई के यहां का भोजन कर रहे थे किसी ने कहा स्वामी जी यह तो नाई की रोटी है, महर्षि दयानन्द ने कहा यह गेहूं की और मेहनत की कमाई की रोटी है, चोरी व किसी को दुःखी कर बेईमानी से कमाए अन्न को ग्रहण नहीं करना चाहिए। महर्षि दयानन्द जी ने ऐसे संदेश व भावनाओं द्वारा जाति भेद की खाई को दूर किया।

आर्य समाज के इस नियमों में छठा नियम इस प्रकार है – संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना। आर्य समाज अपने जन्म काल से ही उपकार और सेवा की संस्था रहा है। आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द ने सामाजिक कुरीतियों, जात–पात, छुआछूत, जन्म से वर्ण व्यवस्था, नारी अपमान, समाज के एक महत्वपर्णू अंग हो अछूत व दलित बनाकर रखना इत्यादि दोषों का प्रबल खंड़न किया।

आर्य समाज द्वारा सामाजिक सुधार

आर्य समाज के उदय एवं प्रसार के समय भारतीय समाज जिन सामाजिक कुरीतियों से घिरा हुआ था। उनके निवारण में आर्य समाज का योगदान बहुत महत्वपूर्ण है जिसका संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है।

पर्दा प्रथा

19 वीं सदी में पर्दा प्रथा की कुरीति बहुत अधिक प्रचलित थी। वैदिक और बौद्धिककाल तक में भारतीय स्त्रियों में परदे की कोई चर्चा नही पाई जाती थी। अनुमान लगाया गया है कि यह प्रथा मुसलमानों के शासन काल में प्रारम्भ हुई थी। यथा राजा तथा प्रजा इस लोकोक्ति के अनुसार यह कल्पना उचित भी प्रतीत होती है। कुरीतियों की यह रीति है कि वे एक बार जड़ पकड़ने के पश्चात आसानी से नष्ट नहीं होती है। गुम्बज में हुए शब्द की प्रतिध्वनि की भांति देर तक सिसकती रहती है। 9 वीं सदी के मध्य भाग मे भी परदे की कुप्रथा का सही हाल था।

स्वामी दयानन्द द्वारा परदे की कुप्रथा को पहली चोट पहुचाई। पढ़ी लिखी लड़कियों को पर्दा अस्वाभाविक प्रतीत होने लगा। परदे की दूसरी ठोकर तब लगी जब आर्य समाज के जलसों में स्त्रियों की उपस्थिति आवश्यक समझी जाने लगी। आर्य समाज ने इस सामाजिक बुराई को समाप्त करने में जनका को जागरुक किया और महत्वपूर्ण योगदान दिया।

सती प्रथा व विधवा विवाह

19वीं शताब्दी के आरम्भ मे हिन्दू स्त्रियों की हीन दशा के कारण थे उनमें से दो मुख्य थे। पहला कारण यह था कि पति के मर जाने पर पत्नी को उसके साथ चिता पर जिन्दा जला दिया जाता था। परन्तु आर्य समाज की कोशिशों के कारण अंग्रेजी सरकार ने इस पर कानून प्रतिबंध लगा दिया। एक पुरुष पहली पत्नी के मरने के बाद या जीवत होने पर दूसरा विवाह कर सकता है। परन्तु स्त्री जाति के पति के मर जाने पर भी पुर्नविवाह नही कर सकती थी।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने विधवाओं की दुदर्शा को देखा और उन्होने इस समस्या के समाधान के लिए जो विचार प्रस्तुत किए वे अन्यन्त महत्वपूर्ण थे। आर्य समाज ने बहुत से विधवा पूर्नविवाह करवाये तथा समाज सुधार में सराहनीय कार्य किया है।

बाल विवाह और अनमेल विवाह

19वीं शताब्दी में समाज में बाल विवाह तथा अनमेल विवाह की कुप्रथा भी प्रचलित थी। पवन, शक, हूण, कुराण, आदि विदेशी आक्रमणों के समय भारत में बाल विवाह की कुप्रथा प्रचलित हुई। तुर्क अफगान युग में बाल विवाह में अधिक वृद्धि हुई उद्दण्ड़ मुस्लिम सैनिकों तथा राजकर्मचारियों के भय के कारण हिन्दु लोग अपने बच्चों की शादी काफी कम उर्म में ही

कर देते थे। यह कुप्रथा आर्य जाति में काफी गहराई तक घर कर गई थी। विवाह की आयु सीमा घटते घटते 4–5 वर्ष तक पहुच गई थी। महर्षि बाल विवाह को इतना अधिक हानिकारक मानते थे कि उन्होने इसको बन्द करने के लिए राजशक्ति तक का प्रयोग करने परामर्श दिया। राजसभा द्वारा जिन प्रयोजनों के लिए कानून बनाने चाहिए, उनमें महर्षि ने बाल्यवस्था में विवाह को रोकना भी सम्मिलित किया है। के है।

दूसरी प्रथा जिसपर आर्य समाज ने अनमेल विवाह पर भी रोक लगावने में काफी महत्वपूर्ण योगदान दिया। उन्होने गांव गाव तथा घर घर जाकर लोगों को इस कुप्रथा के बारें में जगाया तथा उस प्रथा को समाप्त करवाया।

अस्पृश्यता की समस्या

19वीं सदी के मध्य में भाग में जनता के एक बड़े भाग को अस्पृश्य माना जाता था। आज भी भारत के जनमानस की यही दशा है। लोगों को उनके गुण कर्म के आधार पर नही बल्कि जातिवाद के आधार पर देखा जाता हे। अछूतों या दलितों की दशा को सुधारने के लिए महर्षि ने जो विचार दिए है, उनके मूल में यह बात काम कर रही है कि समाज में मनुष्य की स्थिति इसके गुण, कर्म के अनुसार होनी चाहिए। सभी को शिक्षा प्राप्त करने का समान अवसर दिया जाना चाहिए। महर्षि के अनुसार जिन लोगों को शुद्र या अतिशुद्र समझा जाता है।, उनकी सन्तान को भी शिक्षा के लिए वे ही सुविधाएं प्राप्त होगी जो कुलीन से कुलीन तथा उच्च से उच्च स्थिति के माता – पिता की सन्तान को प्राप्त हो। इस दशा में कोई मनुष्य अस्पृश्य रह ही कैसे सकता है। शिक्षा प्राप्त करेगें और जन्म या कुल के आधार पर किसी को बड़ा या छोटा नही माना जाएगा। कुछ लोग ऐसे भी अवश्य होगें, जो शिक्षा का समुचित अवसर प्राप्त करके मूर्ख व अयोग्य रह जायेगें। इन्ही को महर्षि ने शुद्र वर्ग के अन्तगर्त किया है। ये शारीरिक श्रम तथा अन्य वर्णों की सेवा कर अपने जीवन का निवाई करेगें। पर इन्हे भी समाज का अंग माना जाएगा और इनकी स्थिति भी हीन होगी क्योंकि समाज के लिए इनका भी उपयोग है।

महर्षि जी ने लिखा है कि चारों वर्णों को परस्पर प्रीति, उपकार, सज्जनता, सुख, दुःख हानि, लाभ में एकमत रहकर राज्य और प्रजा की उन्नति में तन, मन, धन का व्यय करते रहना चाहिए।

इन कुरीतियों के अतिरिक्त उस समय भारतीय समाज अनेक धार्मिक और सामाजिक अन्धविश्वासों से जकड़ा हुआ था। उस समय का समाज धर्म और जाति के नाम पर बंटा हुआ था। भूत – प्रेत आदि के अस्तित्व में पूरा विश्वास था। अनेक प्रकार के पाखण्ड़ और रुढियां उनके जीवन में गहरा स्थान बनाये हुए थे।

इस समय समाज में अनेक अमानवीय तथा असंगत कुरीतियां जैसे हिन्दुओं में विशेषकर राजपूतों में कन्याओं को जन्म से ही अशुभ माना जाता था और जन्म के समय की उनकी हत्या कर दी जाती थी। यह प्रथा बहुत ही अमानवीय तथा क्रुर थी। इसके अतिरिक्त दहेज–प्रथा और बलि प्रथा जैसी कुरीतियों भी प्रचलित थी। इन सब का आर्य समाज ने विरोध किया।

भारत में रुढिवादी और निसहाय जनता विशेषकर गावों में पहले चेतना लाने का श्रेय आर्य समाज को दिया जाता है। आर्य समाज के प्रचारकों और भजनोपदेशकों ने जलूसों में भाषणों और गीत – भजनो द्वारा सामाजिक कुरीतियों एवं अन्ध विश्वासों का खण्डन किया। इससे लोगों में नई चेतना एवं जागृति आई।

आर्य समाज में मन्दिर मस्जिद, गुरुद्वारा आदि को व्यर्थ माना है। वे मूर्ति पूजा के कट्टर विरोधी थे। स्वामी जी ने मूर्तिपूता की अपेक्षा वेद विद्या को अधिक महत्व दिया है।

आर्य समाज ने विद्यालयों एवं मन्दिरों के दरवाजे अछूतों के लिए खुलवाऐं। उनको अन्य जातियों के समान सम्मानित स्थान दिलाने की चेष्ठा की आर्य समाज ने अछूतों के उद्धार के लिए आन्दोलन चलाये। उन्होने समाज में फेल कुरीतियों के विरुद्ध आवाज उठाई और साथ ही लोगों को इन बुराईयों के प्रति जागृत किया। परिणामस्वरुप इसके बाद लोगों के चिन्तन पर भी इसका काफी प्रभाव पड़ा। इस प्रकार आर्य समाज ने समाज सुधार में महत्वपूर्ण योगदान दिया। जिससे समाज में व्याप्त बहुत सी बुराईयों समाप्त हो गयी।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. अशोक, ''आर्य समाज एक चिन्तन'', प्रथम संस्करण, 1996
2. आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधी सभा का साप्ताहिक पत्र, ''आर्य समाज'' 18 जनवरी से 24 जनवरी 2004
3. जगतरात आर्य, ''युग निर्माता स्वामी दयानन्द, ''संस्करण, 1996
4. डॉ॰ इन्द्र विद्यावाचस्पति ''आर्य समाज का इतिहास भाग–1 दिल्ली।
5. दीनानाथ सिद्धान्तालंकार, ''आर्य समाज की उपलब्धियां, प्रथम संस्करण, 1975
6. डॉ॰ धर्मदेव विद्यार्थी ''डी॰ ए॰ वी॰ आंदोलन का इतिहास'' (1886 से 1947) संस्करण, 2003
7. डॉ॰ सत्येकु विद्यालंकार, प्रो॰ हरिदत वेदालंकार एवं डॉ॰ भवानी लाल, भारतीय आर्य समाज का इतिहास, भाग–4, प्रथम संस्करण, 1985